अध्याय-7

सर्वे ऑफ लिटरेचर

सर्वे ऑफ लिटरेचर

(पोषण के क्षेत्र में पूर्वकृत प्रासंगिक शोध कार्यों की समीक्षा)

पोषण न्यूनता के परिप्रेक्ष्य में हुए अब तक के प्रासंगिक शोधों का विवरण इस प्रकार है–

लोवेन्थाल (1900) ने 81 कैदियों के स्वास्थ्य का निरीक्षण किया और प्राप्त किया कि 74 कैदी शुष्काक्षिपाक से पीड़ित थे तथा उनकी त्वचा पर पीठिका विस्फोट भी थे। किन्तु उनके आहार में तीन चाय के चम्मच मछली का तेल 9 सप्ताह तक सम्मिलित करते रहने से उनका स्वास्थय सुधर गया।

औस्फोस और मैण्डल (1921) ने विटामिन 'ए' का नेत्र के स्वास्थ्य के संबंध में अध्ययन किया तथा पाया कि 80 प्रतिश्शत चूहों में विटामिन 'ए' की न्यूनता के कारण नेत्र रोग हो गये थे। इसी प्रकार के अन्य कई प्रयोग विदेशों में बालकों पर भी किये गये तथा यह ज्ञात किया गया कि विटामिन 'ए' के अभाव से नेत्र संबन्धी रोग हो जाते हैं।

टरमन (1925) हीली एवं ब्रानर तथा (1936),ने नैतिक विकास पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन कर पाया कि मन्द बुद्धि बालकों की अपेक्षा अधिक बुद्धि वाले बालकों में ईमानदारी, सहनशीलता और सत्यवादिता के गुण अधिक मात्रा में पाये जाते हैं।

हॉबलर (1928) ने बालकों पर थायमीन के प्रभाव पर अध्ययन के दौरान यह पाया कि जिन बालकों को जिन बालकों को पर्याप्त मात्रा में थायमिन उपलब्ध नहीं हुआ था, उनके आहार में 1/2 चाय के चम्मच भर बूअर ईस्ट का सत्व सम्मिलित करने से उनकी भूख में सुधार हुआ और उनकी ग्रीवा, बाँहें और टाँगों में जो सख्ती आ गयी थी वह दूर हो गई और उनके रूप में बहुत अन्तर पाया गया।

जो बालक चिड़चिड़े व पीले रंग के थे, वे हँसमुख व गुलाबी रंग के हो गये।

हार्टशोर (1928) ने एक अध्ययन में यह देखा कि दृढ़ नैतिक मूल्यों का विकास धार्मिक शिक्षा के कारण होता है। बालक जितना ही अधिक स्वस्थ और धार्मिक वातावरण में पलता है वह उतना ही कम अनैतिक और दुराचारी होता है।

इस के अतिरिक्त कुछ अन्य शोधकर्ताओं ने भी पोषण स्तर एवं उनका शारीरिक विकास से क्या सम्बन्ध हैं, किस प्रकार पोषण की कमी या अधिकता व्यक्ति के शारीरिक विकास को बाधित करती है, अध्ययन किया और यह सिद्ध भी किया कि पोषण स्तर में गड़बडी व्यक्ति के शारीरिक विकास को काफी हद तक प्रभावित करती है। वैज्ञानिकों ने इसका अध्ययन सर्वप्रथम जानवरों पर कर मनुष्यों में इसकी पुष्टि की है।

शेरमेन (1931), क्लार्क (1938), मैक्लड (1940), टेलर 1944) ने अपने अध्ययनों द्वारा यह सिद्ध किया कि जानवरों की वृद्धि रिबोफ्लेविन से प्रभावित होती है तथा इसकी कमी से शरीर के साधारण विकास पर प्रभाव पड़ता है।

इसी प्रकार सेबरल तथा बटलर ने एक स्त्री पर प्रयोग किया। उस स्त्री को आहार में रिबोफ्लेविन नहीं दिया। कुछ दिनों पश्चात् निरीक्षण द्वारा पाया कि उस स्त्री के होठों की श्लेष्मिक झिल्ली लाल हो गयी तथा उसमें दरारें पड़ गई। किन्तु जब उन्हें रिबोफ्लेविन दिया गया तो ये लक्षण समाप्त हो गये।

वॉलच एवं होव (1933) ने अपने प्रयोगों द्वारा यह स्पष्ट कर दिया कि विटामिन 'ए' का दाँतों के विकास से घनिष्ट सम्बन्ध है। उन्होंने अपने प्रयोंगों में चूहों के आहार में विटामिन ए के अभाव का प्रयोग चूहों के दातों पर देखा और यह निष्कर्ष निकाला कि इस विटामिन की हीनता से चूहों के दाँतों का दन्तबल्क (एनामिल) नष्ट हो जाता है परिणाम स्वरूप दाँत सहज में टूटने योग्य एवं खड़िया के समान हो जाते हैं। दन्तबल्क की क्षीणता का कुप्रभाव दन्त कोशिका प्रसू (obonitoblast) एवं दन्तधातु (Dentine) पर शीघ्र ही पड़ जाता है जिस कारण

दाँतों का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। इस कथन की पुष्टि अन्य प्रयोगों द्वारा भी की गई है।

क्लॉज (1935) ने उचित मात्रा में विटामिन 'ए' के प्रयोग से शरीर की रोगक्षमता में वृद्धि हो जाती है, यह ज्ञात करने हेतु उन्होंने विटामिन 'ए' का प्रभाव तीन वर्ष से अल्पायु वाले 317 रोगी बालकों पर देखा और निरीक्षण किया कि जिन बालकों के आहार में 3 महीने की आयु से ही कॉडलिवर आयल था छः माह की आयु से केरोटीन युक्त हरी सब्जियाँ सम्मिलित थी उनके अपेक्षा बालकों में दो गुनी तीब्रता से रोग के लक्षण प्रगट हुए।

मैकबेथ एवं जूकेर (1938) ने दन्तक्षरण के निरोध में विटामिन 'डी' की भूमिका का अध्ययन करने हेतु उन्होंने 888 बालकों का, जिनकी आयु 6 से 14 वर्ष की थी, निरीक्षण किया तथा पाया कि भोजन में विभिन्न मात्रा में विटामिन 'डी' सम्मिलित करने का प्रभाव भी प्रत्येक बालक में भिन्न रहा है बालकों को 250, 400, 800, ई0 यूनिट विटामिन 'डी' दिया गया। जिन बालकों को 800 ई0 यूनिट विटामिन मिला, उन्में दन्तक्षरण का निवारण पूर्ण रूप से हो गया। 400 ई0 यूनिट विटामिन प्राप्त करने वाले बालकों के दाँतों का स्वास्थ्य 250 अं0 इकाई मिलने वाले बालकों की अपेक्षा उत्तम रहा।

मैककैरिशन (1952) ने थायमिन की कमी के प्रभाव का अध्ययन मद्रास के 36 बन्दरों पर किया। उन्होंने 12 बन्दरों को सामान्य भोजन तथा शेष सभी को थायमिन हीन भोजन दिया। उन्होंने परीक्षण से यह निष्कर्ष निकाला की आन्त्र मार्ग के सुचारू प्रेरक कार्य के लिए थायमिन भोजन में नितान्त आवश्यक है। इसकी हीनता से आन्त्र की श्लेष्मिक कला की रोग अवरोधक क्षमता नष्ट हो जाती है। कुत्तों एवं चूहों पर किये गये परीक्षणों में भी थायमीन की कमी से पाचन क्रिया में मंदता में देखी गयी है।

शेरमन (1952) ने रिबोफ्लेविन की आहार में न्यूनता, आंशिक हीनता

एवं पूर्ण अभाव का चूहों के स्वास्थ्य पर प्रभाव का अध्ययन किया तथा पाया कि जिन चूहों को पूर्ण मात्रा में रिबोफ्लेविन प्राप्त हुआ उनकी वृद्धि तीव्र गति से हुई तथा उनमें परिपक्वता भी शीघ्रता से आई। उनमें शक्ति भी अधिक पायी गई । मैककोलम ने भी इस अध्ययन की पुष्टि की है और कहा कि मनुष्य के यौवन की रक्षा के लिए यह विटामिन नितान्त आवश्यक है।

डॉ0 पाल (1957) ने भी कलकत्ता में नेत्र रोग से पीड़ित 150 रोगियों का निरीक्षण किया और 6 माह बाद इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि विटामिन 'ए' का नेत्र के स्वास्थ्य से घनिष्ट संबंध है।

मेण्डिजा एवं प्रेस्कॉट (1966–1980) आदि ने बालक और माँ के बीच के पोषण, सामाजिक, व्यवहारिक, भावनात्मक संबन्धों का व्यापक अध्ययन किया। इन वर्षों में उन्होंने अमेरिका व अफ्रीका की अनेकों जनजातियों का अध्ययन किया। शोध में पाया की इन जनजातियों में विवाह काफी कम उम्र में हो जाता था। जिन जनजातियों में किशोरियाँ अपने खान–पान पर ध्यान देती थी, या फिर जहाँ पर स्त्री की सामाजिक स्थिति ठीक थी, उनका पोषण स्तर भी ठीक था। उन जनजातियों में महामारी की आशंका काफी कम देखी गई। इनमें बच्चे समझदार, कुशाग्र व बलिष्ठ थे। इन जनजातियों में सामाजिकता भी काफी ज्यादा थी और उनका स्वभाव भी ज्यादा उग्र था।

मालवीय, सेनगुप्ता, श्रीवास्तव एवं प्रसाद (1969) आदि ने सरोजनी नगर के प्राइमरी स्कूल के 516 बच्चों पर उनके पोषण स्तर जानकारी संबंधी अध्ययन किया तथा पाया कि खान–पान में पोषक तत्वों का स्तर पोषण सलाहकार समिति (Nutritional Advisory Committee) द्वारा तय किये गये स्तर से काफी कम था। प्रोटीन, कैल्सियम, विटामिन 'ए' तथा एस्कार्विक एसिड की कमी ज्यादा पायी गयी। थायमिन और आयरन का स्तर ठीक–ठाक पाया गया। 78.65% बच्चों में रिकेट्स, 54.65% में त्वचा संबंधी बीमारियाँ तथा घेंघा रोग 2.7% बच्चों में पाई गई।

चड्ढा(1976), त्रिपाठी(1985), कनानी(1990) एवं कोन्सुल(1990) ने अध्ययनों में यह पाया कि 10–15 वर्ष की किशोरियों की वृद्धि में काफी विकृति थी। उम्र–लम्बाई तथा उम्र–भार ज्यादा नीचे था। 66% किशोरियों का वजन मानक का 75% था। 33% की लम्बाई मानकों से 90% कम थी। भारतीय चिकित्सीय अनुसंधान परिषद (ICMR) की 1972 की रिपोर्ट के अनुसार निम्न आर्थिक सामाजिक स्तर की 10–18 वर्षीय किशोरियों में भार वृद्धि 17.7 किग्रा0 थी जबकि राष्ट्रीय बाल स्वास्थ्य योजना के मानक के अनुसार 25.4 किग्रा होनी चाहिए। इन अध्ययनों ने कारणों का विश्लेषण करने पर यह पाया कि 25–50% तक किशोरियों में विटामिन 'ए' की कमी पायी गई जिसके लक्षण जैसे कि कन्जक्टिवल जिरोसिस (Conjunctival Xerosis) तथा बीटॉट् स्पॉट्स (Bitot Spots) पाये गये थे। 60% किशेरियों में एनिमिया के लक्षण दिखाई दिये। इसके साथ ही यह भी पाया गया कि 15–20 वर्ष आयु वर्ग की किशोरियों में कैलोरी की मात्रा भी कम थी।

रिचर्ड, वतान्बे एवं कैथिस (1973) ने कुपोषण के प्रभावों का अध्ययन न्यूजीलैण्ड के 38 सफेद खरगोशों पर किया। उन्होंने उन्हें 21 दिनों तक सामान्य से कम पोषण दिया। पोषण को कम करने से शारीरिक वृद्धि में 53 प्रतिशत तथा मस्तिष्क वृद्धि में 8 प्रतिशत की कमी दर्ज की गई। पोषण की कमी का मस्तिष्क पर प्रभाव खरगोशों पर चूहों की अपेक्षा कम पाया गया। यह भी देखा गया कि कुपोषित खरगोशों का काफी उत्तेजक और अतिसक्रिय व्यवहार था जो कि मस्तिष्क की नियंत्रण क्षमता के कमजोर होने के कारण हुआ था।

नूनॉन, रार्बटा (1977) आदि शोधकर्ताओं ने खानपान, उसका व्यवहार और ग्राह्य क्षमता के ऊपर अध्ययन किया एक किशोर लड़की जिसका घर तथा स्कूल पर दिक्कते करने का काफी पुराना रिकार्ड था, उसके खान–पान में परिवर्तन किया गया। 14 दिन के लिए उसके भोजन से सुगर कृत्रिम रंग और सुगंध, नाइट्रेट, सैलिकायलेट्स तथा वे अन्य खाद्य जिससे उसे एलर्जी थी, उन्हें हटा दिया गया।

45 बिन्दुओं की एक व्यवहार चेकलिस्ट तैयार की गई तथा उसे उसके माता–पिता तथा शिक्षक को दी गयी। शोध से पहले 45 में से 39 बिन्दुओं पर किशोरी में समस्या पायी गई, परन्तु शोध की अवधि के बाद उसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन पाए गए। उसके बाद मात्र पाँच बिन्दुओं पर उसे औसत से नीचे पाया गया। खान–पान नियंत्रित करने के तीसरे दिन यह सुधार परिलक्षित होने लगे थे। उसकी सीखने की क्षमता में भी अभूतपूर्व सुधार पाया गया।

हंस (1990) ने बालिकाओं का एक सर्वेक्षण कर गरीबी, अभाव, अशिक्षा एवं पोषण की कमी को तमाम समस्याओं का आधार पाया है।

बेदी, रून्सलैण्ड एवं ब्रिबेन (1992) ने चूहों पर किये गये दो प्रयोगों द्वारा यह जानने का प्रयास किया गया कि चूहों को अगर कुपोषित रखा जाय तो उसका (Learning Capacity) सीखने की क्षमता पर क्या प्रभाव पड़ता है। इसमें उन्होंने पाया कि कुपोषित चूहों का कुपोषण की अवधि के तुरन्त बाद विकास मंद था। परन्तु बाद में उनका पोषण सामान्य करने पर उनका विकास निर्धारित मानकों के अनुसार ही पाया गया। ।

सोमर (1994) ने विटामिन 'ए' की कमी, व उसका बच्चों पर प्रभाव का अध्ययन करने पर पाया कि विटामिन 'ए' की कमी से बच्चों के संक्रमण से ग्रसित होने की सम्भावना काफी बढ़ जाती है। इससे मारटेलिटी (Mortality) तथा मॉरबीडिटी (Morbidity) के घटने की सम्भावना बढ़ जाती है।

गोलुब, कीन, ग्रेशविन एवं हेन्ड्रिक्स (1995) आदि ने जिंक की कमी का व्यवहार पर अध्ययन मूलतः चूहों और बंदरों पर किया और यह पाया कि चूहों के भावनाओं (Emotion)में जिंक की कमी से परिवर्तन आया था। जिंक की कमी वाले समय में ये चूहें सुस्त तथा असंवेदनशील हो गये थे।

स्क्रिमशॉ (1998) ने प्रोटीन कैलोरी, आयरन और आयोडीन की कमी से अधिकतर समस्याओं का सम्बन्ध है पर अध्ययन किया तथा पाया कि जन्म से तीन

वर्ष तक इन तत्वों की कमी अत्यधिक हानिकारक होती है परन्तु उम्र के बढ़ने के साथ इसका प्रभाव कमतर हो जाता है। हालाँकि शोधकर्ता ने आयरन की कमी का अध्ययन दो किशोर वर्गों पर किया। उन्होंने पाया की जिस वर्ग में आयरन की कमी थी, उसकी बुद्धिमत्ता व क्रियाशीलता दूसरे वर्ग की अपेक्षा कुछ कम थी, पर उसे ठोस कारण कहना मुश्किल है।

क्लिन मैन ने अमेरिका के 9 राज्यों और कोलम्बिया जिले के 328 लोगों पर किये गये अध्ययन में यह पाया कि अमूमन सभी व्यावहारिक, भावनात्मक तथा शैक्षिक समस्याएँ कुपोषित बच्चों में ज्यादा थी। हाँलांकि कुपोषित बच्चों में उत्तेजना तथा आक्रामक प्रवृत्ति काफी देखी गई।

हरॉल्ड एवं सनस्टीड (1999) ने पाया कि प्रोटीन–कैलोरी कुपोषण (PEM) की कमी से बच्चों का वातावरण से मेल मिलाप काफी कम हो जाता है। इसके कारण बालक में अर्न्तमुखिता एवं दब्बूपन के गुण विकसित हो जाता है। किन्तु यह प्रभाव किशोरों पर नहीं पाया गया।

गोलुब, कीन और ग्रेशविन (1999) ने किशोर बंदरियों पर जिंक तथा आयरन की कमी के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए उन्होंने 16 किशोर (Pubertal) बंदरियों को जिंक तथा आयरन की कमी युक्त आहार 3 महीने के लिए दिया, तदुपरान्त इनमें से आधों को गाय का माँस पाउडर के रूप में खिलाया गया तो पाया गया कि जिन बंदरियों को यह पाउडर नहीं दिया गया था उन्होंने टेस्ट में भाग लेना काफी कम कर दिया। वे सक्रिय भी कम थे तथा किसी बात पर प्रतिक्रिया भी काफी देर से व्यक्त कर रहे थे।

चेमाली, मैकिन्टायर एवं अब्राहम (2000) ने गाउटेंग इलाके के 16 पब्लिक तथा प्राइवेट स्कूलों में 15–17 साल की किशोरियों पर कैल्शियम के सेवन व उससे संबन्धित जानकारी के लिए अध्ययन किया और यह पाया कि जहाँ विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) मानक के अनुसार 300 mg/day कैल्शियम का सेवन समुचित है,

इन किशोरियों में यह 80 mg/day था। 80 प्रतिशत अभिभावकों को पोषण के विषय में जानकारी थी। अतः अस्थि सुषिरता (Osteoporosis) की बीमारी इस इलाके में काफी कम थी। साथ ही इस इलाके की किशोरियाँ एथलेटिक्स में काफी सक्रिय थी।

टामकिन्सम, हॉल, लॉरी, किहामिया, बंडी एवं बीसली (2000) आदि शोधकर्त्ताओं ने टैंगा, तंजानिया में प्रति सप्ताह 400mg फेरस सल्फेट की डोज का किशोरियों पर क्या असर होता है, इसका चार महीने तक अध्ययन किया और यह पाया कि जिस समूह को फेरस सल्फेट की डोज दी गई उनमें दूसरे समूह की अपेक्षा सिरम फेरिटिन की मात्रा में वृद्धि दर्ज की गयी परन्तु हीमोग्लोबिन के स्तर में दोनों समूहों में कोई अन्तर नहीं पाया गया। जिन किशोरियों को आयरन की यह डाईट (Diet) दी गई थी उनमें दूसरों की अपेक्षा अधिक भार वृद्धि दर्ज की गई।

कनानी एवं पूजारा(2000) आदि शोधकर्ताओं ने बड़ोदरा के 10–18 वर्षीय किशोरियों के विकास पर आयरन एवं फोलिक एसिड के प्रभाव का अध्ययन किया तथा यह पाया कि आयरन एवं फोलिक एसिड की भारत में काफी कमी है; अतः आयरन–फोलिक एसिड युक्त टेबलेटों की काफी डिमांड थी। अमूमन 90% किशोरियों ने दी गई टेबलेटों का सेवन किया। इसके पश्चात् यह तथ्य सामने आया कि जिस समूह को टेबलेट दी गयी थी उसमें 17.3 g/L हीमोग्लोबिन वृद्धि दर्ज की गई। टेबलेट वाले समूह में किशोरियों की आहार क्षमता भी बढ़ी, परिणामतः उनके भार में 83 Kg की भी वृद्धि दर्ज की गई। जबकि कंट्रोल ग्रुप में वृद्धि काफी कम थी। 10–14 आयु वर्ग में यह वृद्धि 15–18 आयुवर्ग वालों की अपेक्षा अधिक पाई गई।

फारूक अहमद(2000) ने बाँग्लादेश में एनीमिया पर किये गए सर्वेक्षण में पाया कि ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीण क्षेत्रों में 43 प्रतिशत किशोरियाँ एनीमिया ग्रस्त थी। शोध के दौरान उन्होंने यह भी पाया कि उनकी बंगाली भोजन शैली भी एनीमिया के लिए उत्तरदायी है।

रोजेन, रेनर्ट, हेडी, डियाब एवं दाउद(2001) ने 2000 यहूदी इसरायली तथा अरब लड़कियों पर कैल्शियम सेवन एवं अस्थि भार विकास सम्बन्धित अध्ययन किया तथा पाया कि 112 लड़कियाँ जिनका कैल्शियम का सेवन 800mg/day से कम था, उनके हड्डी में खनिज का घनत्व निकाला गया। शोध में पाया गया कि कैल्शियम की औसत खपत 1260 mg/day थी पर 20 प्रतिशत में यह खपत 800 mg/day से कम थी। 800 mg/day से कम कैल्शियम खानेवाली लड़कियों में फास्फोरस (95.2 प्रतिशत) मैगनिशियम (84.8 प्रतिशत), आयरन (90.5 प्रतिशत) तथा जिंक (100 प्रतिशत) की भी कमी पायी गई। यहूदी लड़कियों में फास्फोरस की मात्रा ठीक थी पर अरबों की तुलना में मैग्नीशियम तथा आयरन कम था। यहूदी और अरब दोनों वर्गों की लड़कियों में कैल्शियम तथा जिंक की कमी पायी गयी। Body mass Index (BMI) तथा उम्र में कोई निर्भरता नहीं पायी गयी। यह भी पाया गया कि 800 mg/day से कम कैल्शियम सेवन करने वाली लड़कियों में भी अस्थि धातु धनत्व औसत के आस–पास पायी गयी जो कि आश्चर्यजनक थी। अस्थि धातु धनत्व(BMD) तथा बोन मिनरल कण्टेण्ट (BMC) में काफी निर्भरता पायी गयी। निष्कर्षतः यह पाया गया कि किशोरावस्था में कम कैल्शियम का सेवन किशोरियों में हड्डियों की वृद्धि तथा सशक्तीकरण को प्रभावित करता है।

अल्मेडा एवं अराजू (2001) आदि ने ज़न्मोत्तर प्रोटीन कमी का प्रभाव बालक के खेलकूद, कौशल एवं सामाजिक व्यवहार पर पाया है। इनके अनुसार प्रोटीन की कमी से खेलकूद, कौशल एवं सामाजिक व्यवहार या सामाजिकता के अधिगमन में कमी आती है।

टामकिन्स (2001) ने अध्ययन में पाया कि यूरोप के देशों में किशोरों का पोषण एक गम्भीर समस्या है। अनियन्त्रित तथा कुपोषित भोजन किशोरों के विकास तथा नैतिकता की भी प्रभावित करता है। हालांकि इसको सिद्ध करने के लिए कोई ठोस फील्ड वर्क नहीं हुआ है, पर एक आम व्यक्ति का यह मानना है कि सक्रिय

तथा तेजस्वी वयस्क बनाने के लिए राष्ट्र की एक पोषण नीति होनी चाहिए।

मैक, ग्रेगर एवं एनी (2001) ने बच्चों के संवेगात्मक तथा क्रियात्मक व्यवहार पर आयरन की कमी का अध्ययन किया। उन्होंने शोध में बचपन में कुपोषित 50 बच्चों को लिया तथा किशोरावस्था में इन्हें आयरन की प्रचुरता युक्त खान–पान दिया गया, परन्तु आश्चर्यजनक रूप से शोधकर्ताओं को इन बच्चों के संवेगात्मक और क्रियात्मक कार्यकलाप पर कोई खास प्रभाव नहीं दिखा।

ग्रीनफील्ड, फ्रेजर, कियोऊ, ट्रूब एवं यून्नहावोनी (2001) आदि ने बीजिंग में 1248, 12–14 वर्षीय किशोरियों पर किये गये सर्वेक्षण में पाया कि 45% किशोरियाँ विटामिन 'डी' की कमी से ग्रस्त थी। इसका कारण चीन के पारम्परिक खाद्य पदार्थों में विटामिन 'डी' का अभाव पाया गया। इस पोषक तत्व की कमी के कारण इन किशोरियों को जाड़ों में काफी परेशानी होती थी। ये अक्सर हाथ–पैरों के दर्द से ग्रस्त रहती थी।

अधम, हाशिम, शबाना एवं कमाल (2002) आदि ने व्यस्क तथा विकसित मछलियों पर विटामिन 'सी' की कमी का अध्ययन करने पर यह पाया कि इसकी कमी से मछलियों में अनीमिया हो गया क्योंकि विटामिन 'सी' उनकी आतों में आयरन को सोखने में काफी महत्वपूर्ण तत्व है। लाल रक्त कणिकाओं (Red Blood Cells) में काफी कमी हो गई। इसके साथ ही यह भी देखा गया कि मछलियों में संक्रमण (Infection) भी काफी बढ़ गया।

उमापति, मैकिण्डेन, हून्ज एवं मॉरिस (2002) ने Effect of Chronic undernutrition on growth(Pigs) विषय पर अध्ययन किया। उन्होंने 144 सफेद x-Landrace नर सुअरों को तीन वर्गो में बाँटा। पहले वर्ग (R) को कच्चे सोयाबीन दूसरे वर्ग (c) को उबले सोयाबीन तथा तीसरे वर्ग को (CR) उबले परन्तु 50% के स्तर पर सोयाबीन दिया गया। छः महीने के अध्ययन में पाया गया कि C और R वर्ग का वृद्धि पैटर्न अमूमन एक जैसा था परन्तु CR का अलग था।

पावलास्की, मार्शन, शियोर, फर्नाण्डेज, जैमीशन(2003) ने माली (पश्चिमी

अफ्रीका का देश) के सिगाऊ (Sigou) क्षेत्र के 10–15 वर्षीय किशोरियों पर आयोडीन की कमी के प्रभाव का एक अध्ययन किया तथा यह पाया कि 40 लड़कियों में आयोडीन की कमी पायी गई (66.6%) जिनमें 19 में (31.7%) मध्यम से उच्च स्तर तक कमी थी। शोधकर्ताओं ने सभी किशोरियों की खानपान की परिपाटी जानने के लिए एथनोग्राफिक साक्षात्कार (Ethnographic Interview) भी लिया, और उन्होंने पाया की कुपोषण के कारण आयोडीन की कमी न केवल किशोरियों के स्वास्थ्य को प्रभावित करती है, बल्कि उनके तथा उनके जनजातीय समूह के सामाजिक आर्थिक स्तर तथा अस्तित्व को भी प्रभावित करती है तथा इसके साथ ही किशोरियों के किकास पर घातक प्रभाव पड़ता है, यह न केवल उनकी प्रजनन क्षमता पर असर डालता है, अपितु Fetus की वृद्धि को भी प्रभावित करता है, थायराइड ग्रन्थि को भी प्रभावित करता है, जो उत्तरोत्तर में कम बुद्धि कौशल (I.Q.) गूंगापन, बहरापन तथा संवेगीय समस्याएँ उत्पन्न करती हैं।

चौधरी, मिश्रा एवं शुक्ला(2003) ने वाराणसी के ग्रामीण क्षेत्रों में किये गये सर्वेक्षण में पाया है कि 68.52 प्रतिशत किशोर व किशोरियों का बॉडी मास इन्डेक्स 18.5 kg/m^2 से कम था। उन्होंने पोषण की जानकारी के अभाव को इसका मुख्य कारण माना था।

एलिजाबेथ, रैन्सम एवं एल्डस (2003) आदि ने अपने वृहद शोध में पोषण तथा महिलाओं से जुड़े हरेक चीज का अध्ययन किया। किशोरियों पर शोध में पाया गया कि कुपोषण का सबसे ज्यादा दुष्परिणाम उन पर ही होता है क्योंकि उनकी शारीरिक तथा हार्मोनल वृद्धि दर काफी तेज होती है उन्हें मासिक धर्म के समय प्रोटीन आयरन तथा अन्य तत्वों की आवश्यकता होती है। किशोरावस्था में गर्भवती होने वाली किशोरियों पर काफी खतरा होता है क्योंकि उनकी स्वयं की वृद्धि पूरी नहीं हुई होती है। इस कारण उनमें और बच्चे में पोषण तत्वों के लिए संघर्ष रहता है। इसका परिणाम नवजात शिशु में कम भार तथा आकस्मिक मृत्यु हो सकता है।

स्टेबलर एवं एलर्ट (2004) आदि शोधकर्ताओं ने बिटामिन 'बी12' की कमी

और उसके प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि भारतीय उप महाद्वीप खासकर भारत में किशोरियों का खान–पान मुख्यतः शाकाहारी होने के कारण वे परनिसियस एनिमिया से ग्रस्त रहती हैं, जो बाद में एनिमिया से ग्रस्त होने का मुख्य कारण बन जाती है तथा इससे उनका प्रजनन विकास भी काफी प्रभावित होता है।

बेनेफाइस, गार्नियर एवं नडिए (2004) आदि शोधकर्ताओं ने सेनेगल के नियारवर जिले में 40 किशोरियों पर अध्ययन कर उनकी सोने की आदतों, पोषण स्तर और वृद्धि में परस्पर निर्भरता जानने का प्रयास किया और उन्होंने पाया कि बाडी मॉस इण्डेक्स (BMI) और सोने की आदतों में काफी समानता है। दुबली–पतली लड़कियाँ (जो कि सामान्यतः कुपोषित होती हैं) सामान्य किशोरियों की अपेक्षा ज्यादा सोती हैं। सामान्य से अधिक सोने के कारण उनका शारीरिक विकास तो प्रभावित होता ही है, उनमें चिड़चिड़ापन भी आ जाता है। उनकी सामाजिकता तथा सक्रियता भी काफी कम हो जाती है। यह सब उनके व्यक्तित्त्व को प्रभावित करता है। उनका मानसिक तथा सामाजिक विकास भी इससे प्रभावित होता है।

हातून, इस्लाम चीजमेग्लू, कारा, बाबोग्लू, बर्क एवं गोकाल्प (2005) आदि शोधकर्त्ताओं ने विटामिन 'डी' की कमी और उससे जुड़े कारणों की समीक्षा के लिए तुर्की में 13–17 वर्ष की 89 किशोरियों पर शोध किया तथा किशोरियों को तीन भागों में विभक्त किया गया। पहले वर्ग में ग्रामीण क्षेत्रों, दूसरे वर्ग में शहरी क्षेत्रों तथा तीसरे वर्ग में शहरी क्षेत्रों की ऐसी लड़कियाँ थी जो धार्मिक कारणों से काफी ज्यादा कपड़े पहनती थी। कुल 39 लड़कियों(43.8 प्रतिशत) में विटामिन 'डी' की कमी तथा 19 (21.3 प्रतिशत) में न्यूनता थी। जबकि तीसरे वर्ग में 50 प्रतिशत किशोरियों में पोषण न्यूनता थी।

एडम्स (2005) विभिन्न रिसर्च पेपरों तथा Field Study को विश्लेषित करते हुए यह पाया कि मस्तिष्क की गतिविधि पर पोषण का काफी प्रभाव पड़ता है। प्रोटीन, आयरन तथा आयोडीन बच्चे की सीख व व्यवहार पर असर डालता है। नये

शोधों में यह बात भी सामने आयी कि फैटी एसिड, खनिज तत्व तथा विटामिन का अतिरिक्त सेवन कई व्यावहारिक विकृतियों को कम करने में सहायक होती है। हाँलाकि इस विषय पर शोध अभी बहुत कम हुए हैं।

रहमान अहमद(2005) ने समकालीन अध्ययन द्वारा बंग्लादेशी किशोरियों का शारीरिक स्तर, पोषण तथा खान–पान का अध्ययन किया। 14–19 वर्ष की 1211 किशोरियाँ गारमेन्ट (कपड़ा) फैक्ट्री में काम करती थी। यह पाया गया कि 65% लड़कियाँ कद में छोटी थी। 14 वर्ष में औसत भार 38 Kg, 18–19 वर्ष में 42 Kg था। 17 प्रतिशत लड़कियाँ दुबली थी। 23 प्रतिशत काफी पतली थी। खानपान में कैलोरी, प्रोटीन, कैल्सियम, आयरन आदि तत्व भी काफी कम था। अधिकतर कैलोरी तथा पोषक तत्व अनाज से मिलते थे। अण्डा, दूध, माँस तथा हरी सब्जियों का सेवन भी काफी कम था।

सिद्धू, कान्ता, एंव उप्पल (2005) ने 11 से 15 वर्ष की अमृतसर की 265 अनुसूचित जाति की किशोरियों पर एनीमिया एवं उसके प्रभावों का अध्ययन किया था। 265 अनुसूचित जाति की किशोरियों में मात्र 29.43% सामान्य थी। 70.50% किशोरियाँ विभिन्न स्तर के एनीमिया से ग्रस्त थी। 30.54% निम्न स्तर के एनीमिया 27.17% सामान्य एनीमिया तथा 12.83% उच्च स्तर एनीमिया से ग्रस्त थी। मल्होत्रा और श्रीवास्तव (1982) तथा गोपालदास और काले (1985) ने भी आर्थिक दृष्टि से विपन्न किशोरियों में एनीमिया को काफी गम्भीर समस्या पाया था। कुण्ट और जॉनसन (1994) ने इण्टरनेशनल सेन्टर फार रिसर्च ऑन वुमेन द्वारा किशोरियों पर किये गये एक विश्वव्यापी सर्वेक्षण में 32–551 किशोरियों को एनीमिया से ग्रस्त पाया। अग्रवाल (1998) ने उत्तर–पूर्वी दिल्ली की झुग्गियों में किये गये अध्ययन में पाया कि वहाँ की किशोरियों में एनीमिया का प्रतिशतः 47.60% था। राजरथम (2000) ने तमिलनाडु में 2.10% किशोरियों का उच्च एनीमिया, 6.30% को सामान्य एनीमिया तथा 36.50% को निम्न एनीमिया से ग्रस्त पाया। मेहता (1998) को मुम्बई

की झुग्गियों में यह प्रतिशत 4.80%, 22.40% तथा 36.40% पाया। शोधकर्ता ने 15+ आयुवर्ग को एनीमिया से सबसे ज्यादा ग्रस्त पाया तथा 11+ आयुवर्ग में एनीमिया सबसे कम था। इस शोध में यह बात सामने आयी कि इस आयुवर्ग की किशोरियों में मासिक धर्म के दौरान काफी रक्त स्राव होता है, परन्तु निम्न आर्थिक स्तर के कारण इस दौरान उनका खानपान समान ही रहता है अतः पोषक तत्वों (आयरन) की कमी के कारण वो एनीमिया ग्रस्त हो जाती है।

मालीनास्कस, रेडिव, एबे ,स्मिथ एवं डैलन (2006) आदि शोधकर्ताओं ने 18–24 वर्ष की 185 किशोरियों पर मोटापा कम करने के लिए डायटिंग की आदतें और शरीर पर उनके प्रभाव का अध्ययन किया और उन्होंने पाया कि शहरी क्षेत्रों में रहने वाली किशोरियाँ अपनी काया को लेकर काफी सर्तक रहती हैं। छरहरी (Slim) काया के लिए किशोरियाँ खाना कम खाती हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार मोटापे का सम्बन्ध कैलोरी की मात्रा से है परन्तु खाना कम खाने के कारण इन किशोरियों में पोषक तत्वों की कमी पायी गयी। इनमें अधिकतर किशोरियों में चक्कर आना, अचानक मूड खराब हो जाना आदि विकृतियाँ देखने को मिली।

पोस्नर आदि (2006) शोधकर्ताओं ने किशोरियों में मासिक धर्म समय से पहले आरम्भ होने तथा यह किन कारणों से प्रभावित होता है। इस विषय पर शोध किया तथा पाया कि अधिकतर शिक्षक व डाक्टरों का मानना है कि पहले कि अपेक्षा आजकल मासिक धर्म जल्दी शुरू हो रहा है, परन्तु औसत मासिक धर्म आयु पिछले 50 वर्षों में स्थिर ही रही है। विभिन्न प्रजाति समूहों (Racial groups) में भी ज्यादा अन्तर नहीं है। परन्तु उन्होंने पाया कि इसका कुछ सम्बन्ध आर्थिक स्तर व पोषण स्तर से है। सामान्यतः निम्न आर्थिक स्तर व कुपोषित किशोरियों में यह देर से शुरू होता है परन्तु इसका कोई खास हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता है, क्योंकि एक उम्र तक सभी किशोरियाँ अमूमन शारीरिक व मासिक वयस्कता के स्तर तक आ जाती है। उन्होंने यह भी पाया कि जल्दी वयस्क होने वाली युवतियों को

अपने समूह में थोड़ी परेशानी महसूस होती है।

देशमुख, गुप्ता, भराम्बे, डोंगे, कौर, मालिए एवं गर्ग (2006) आदि शोधकर्त्ताओं ने वर्धा के ग्रामीण इलाको में किशोरवय लड़के व लड़कियों के पोषण स्तर का अध्ययन किया। अध्ययन में बॉडी मास इन्डेक्स (BMI) को पोषण का आधार माना। अध्ययन में पाया गया कि कुल 53.8 प्रतिशत किशोर व किशोरियाँ दुबले–पतले थे, 44 प्रतिशत सामान्य थे तथा 2.2 मोटे थे। लड़कों का BMI 16.88 तथा लड़कियों का 15.54 था। दुबले–पतलों की संख्या में ज्यादातर नव किशोर–किशोरियाँ, अशिक्षित अथवा कम शिक्षा प्राप्त तथा निम्न आर्थिक वर्ग के थे।

श्रीहरि, इलाण्डेर, मुथैया, कुरपद एवं शेषाद्रि(2006) ने 6–18 वर्ष के उच्च मध्ययम वर्गीय बच्चों (किशोर व किशोरियाँ) के पोषण स्तर का अध्ययन किया। यह शोध पाँच शहरों में किया गया। अध्ययन में पाया गया कि अनीमिया का प्रतिशत 19–88% तक था। फोलेट, राइबोफ्लेबिन नियासीन, विटामिन C, विटामिन A, विटामिन B_{12} की कमी पायी गई। 8.5–29% में अतिभार व 1.5–7.4% में मोटापा, पाया गया कि बच्चों के खाने में अनाज, दाल व दुग्ध उत्पाद समुचित थे परन्तु फलों व सब्जियों का सेवन कम था।

जेल्स एवं हिलियर (2006) ने विभिन्न पोषक तत्वों का बच्चों के शैक्षिक विकास प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि शुगर के अधिक सेवन से बच्चों के सीखने व व्यवहार में कोई खास परिवर्तन नहीं आया। विटामिन व खनिज तत्वों का भी किशोरों (कम आयवर्ग वालों) के छोटे समूह में भी अन्तर पाया गया। यह शोध पोषण के व्यावहारिक विकास पर प्रभाव का कोई निष्कर्ष प्राप्त नहीं कर सका।

वार्तानियन, श्वार्टज एवं ब्राउनवेल(2007) ने कोल्ड ड्रिंक सेवन का पोषण व स्वास्थ्य पर प्रभाव विषय से सम्बन्धित 88 विभिन्न शोधों का अध्ययन किया। उन्होंने साफ्ट ड्रिंक का सेवन, स्वास्थ्य पर उसका प्रभाव तथा पोषण के सम्बन्ध पर गहन समीक्षा की। इन्होंने स्पष्टतः पाया कि साफ्ट ड्रिंक के सेवन से शारीरिक वजन

बढ़ने के साथ व्यक्ति की रूचि अधिक कैलोरी युक्त खाद्य पदार्थों की ओर हो जाता है। कोल्ड ड्रिंक के सेवन से दूध कैल्सियम तथा अन्य पोषक तत्वों के सेवन में कमी भी पायी गई। शोधकर्त्ता ने शोध के लिए व्यक्ति समूह को विभिन्न वर्गों में विभक्त किया। विभिन्न वर्ग समूहों में कोल्ड ड्रिंक का असर सामान्यतः एक जैसा ही पाया गया। सिर्फ महिलाएँ (जिनमें किशोरियों की शामिल हैं) डायबटिज (Diabeties) से ज्यादा ग्रस्त पाई गई।

बोस, बिसाई एवं भद्र (2007) आदि शोधकर्त्ताओं ने अधिकतर अधिभार तथा मोटापा का अध्ययन 431 (6–9 वर्ष की) बंगाली लड़कियों पर समकालीन विधि से किया और मानक सूत्रों के हिसाब से बॉडी मास इण्डेक्स (BMI) निकाला गया। अन्तिम परिणाम में 17.63 प्रतिशत को अधिक भार का तथा 8.10 प्रतिशत को मोटा पाया गया। यह दर भारत में अधिक पायी गयी। शोधकर्त्ताओं ने बंगाली किशोरियों में अधिभार और मोटापे का कारण उनके द्वारा मिठाई का अधिक सेवन किये जाने को पाया।

राव, पुष्पम एवं एण्टोनी(2007) आदि शोधकर्त्ताओं ने हैदराबाद में आठवीं कक्षा में पढ़ने वाली 164 किशोरियों के आहारीय आदतो एवं पोषणात्मक ज्ञान के संबंध में अध्ययन करने से पाया कि सभी वर्गों की किशोरियों में कोल्ड ड्रिंक, बेकरी आइटम तथा फास्ट फूड़ की अधिकता थी तथा अनाज का सेवन काफी कम था। दूध, फल, हरी सब्जियों का सेवन औसत था। इसके बाद किशोरियों में दो बार पोषण जागरूकता दी गई। पहली बार चार्ट, लीफलेट आदि का प्रयोग किया गया, दूसरी बार दृश्य–श्रव्य सीडी का प्रयोग किया गया। पोषण में पहली बार की जागरूकता के बाद काफी सुधार पाया गया परन्तु दूसरी बार कोई खास सुधार नहीं पाया गया। इसका कारण यह माना गया कि किशोरियाँ चूँकि पहले प्रयोग में जागरूक हो गई थीं, अतः दूसरी बार कोई खास असर नहीं पड़ा।

इस प्रकार अन्य कई मनोवैज्ञानिक डेनियल (1923), हेस आगर (1917),

लेन्मैन (1937) कैण्डेन, लैण्ड और डिल (1940) पिराम एवं लेवैन्सन (1953), ग्रूसिन और स्मिथ किन्सेड (1954), गोल्ड स्मिथ (1950), रेहल (1945), गोल्ड वर्जर (1926), काउगिल, रोजेन वर्ग तथा रोगोफ (1931) आदि ने भी पोषण स्तर एवं शारीरिक विकास एवं स्वास्थ्य से संबंधित अध्ययन किये हैं।

समस्या की व्युत्पत्ति एवं कथन

पोषण के क्षेत्र में असंख्य शोध हुए हैं और अभी हो भी रहे हैं किन्तु अधिकांशतः शोध पोषण स्तर और पोषण तथा शारीरिक विकास एवं विकृत्ति के संबंध में हुए हैं। पोषण एवं सामाजिक विकास तथा पोषण एवं नैतिक विकास के संबंध में बहुत ही कम अध्ययन हुआ है। मनुष्य का मात्र शारीरिक विकास ही पोषण से संबंधित नहीं है केवल मनुष्य के शारीरिक विकास पर पोषण की न्यूनता एवं अधिकता का प्रभाव नहीं पड़ता है। बल्कि मनुष्य का सामाजिक, नैतिक विकास भी पोषण की अनुपयुक्तता से प्रभावित होता है। शोधकर्त्ताओं ने अनेकों शोधों द्वारा यह सिद्ध भी किया है कि पोषण न्यूनता एवं अधिकता दोनों ही मनुष्य के शारीरिक विकास को प्रभावित करती है।

अलमेड़ा तथा उनके सहयोगियों(2000) ने अपने अध्ययन द्वारा इस बात की पुष्टि की है कि पोषण की अनुपयुक्तता का प्रभाव बच्चों के सामाजिक कौशल, खेल–कूद एवं सामाजिक व्यवहार पर पड़ता है। किन्तु यह अध्ययन किशोरों पर नहीं हुआ है। बच्चों, किशोर–किशोरियों आदि के सामाजिक एवं नैतिक विकास से संबंधित अनेकों शोध हुए हैं किन्तु उनका पोषण से कोई संबंध नहीं है।

पोषण स्तर मनुष्य के मात्र शारीरिक विकास को ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विकास को प्रभावित करता है, क्योंकि अगर व्यक्ति स्वस्थ्य है तो उसका विकास उचित अनुपात में होता है और यदि अस्वस्थ्य है तो उसका विकास बाधित होता है, फिर चाहे शारीरिक विकास हो या सामाजिक, नैतिक, सांवेगिक एवं क्रियात्मक

विकास है। आज तक हुए अनेकों शोध यह सत्यापित करते आये है कि पोषण न्यूनता व्यक्ति के शारीरिक विकास को बाधित करती है कुछ शोधों द्वारा यह भी सिद्ध हुआ है कि पोषण न्यूनता बच्चों के सामाजिक व्यवहार एवं कौशलों को भी प्रभावित करती है किन्तु इस क्षेत्र में अभी कम अध्ययन हुए हैं।

कुछ वैज्ञानिकों के0 डी0 ब्लाकफेन (1933), रस्सेक (1973), भाष्करम् एवं अन्य (2000), फेराज एवं अन्य (2002) तथा उमापति एवं अन्य (2002) आदि ने जो कि अध्ययन किया है वह पोषण की कमी या अनुपयुक्तता के संबंध में किया है और उनमें से अधिकांशतः अध्ययन शारीरिक विकास एवं विकृत्ति के संबंध में है। मनोवैज्ञानिक विकास के संबंध में बहुत अध्ययन नहीं हुए हैं, जिसका कारण संभवतः यह है कि इस समस्या के अध्ययन हेतु या तो पोषण वैज्ञानियों ने इसे अपनाया अथवा चिकित्सकों ने।

अतः शोधकर्त्री ने मनोवैज्ञानिक पहलुओं एवं विकास पर प्रकाश डालने हेतु अपने अध्ययन अर्थात् शोध के लिए शारीरिक एवं व्यवहारिक विकास दोनों ही आयामों तथा व्यवहारिक विकास के दो आयाम सामाजिक एवं नैतिक विकास के संदर्भ में कुपोषण का अध्ययन किया जाना समस्या को चयनित किया है ताकि इस क्षेत्र में भी कुछ महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त की जा सकें।

उपकल्पना

इस शोध अध्ययन के उपर्युक्त उद्देश्य के आलोक में निम्नलिखित परिकल्पनाओं की जाँच की गयी–

1. पोषण न्यूनता किशोरियों के सामाजिक एवं नैतिक व्यवहार का निर्धारण करती है।
2. पोषण न्यूनता किशोरियों में व्यवहारिक विकास की समस्या उत्पन्न करती है जिसके फलस्वरूप व्यवहारिक विकृतियाँ जनती है।
3. पोषण न्यूनता किशोरियों के शारीरिक विकास को मन्दित करती है।

अनुसन्धान प्रश्न

करलिंगर(1918) के संकेत किया है कि "अनुसन्धान योग्य समस्याओं को व्यक्त करने का सर्वोत्तम तरीका उन्हें प्रश्नवाचक कथन के रूप में प्रस्तुत करना है।" इसलिए प्रस्तुत अनुसंधान समस्याओं को प्रश्न रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है, जिसका वर्णन अधोलिखित है–

1. क्या पोषण स्तर (उच्च एवं निम्न) एवं व्यक्ति के सामाजिक विकास के मध्य किसी प्रकार का सम्बन्ध है?
2. क्या नैतिक विकास तथा पोषण स्तर के मध्य किसी प्रकार का धनात्मक सम्बन्ध पाया जाता है?
3. क्या पोषण न्यूनता व्यक्ति में व्यावहारिक विकास की समस्या उत्पन्न करती है, जिसके फलस्वरूप व्यावहारिक विकृतियाँ जनती हैं?
4. क्या पोषण स्तर और व्यक्ति के शारीरिक विकास के मध्य किसी प्रकार का सम्बन्ध हो सकता है?

अनुसंधान का उद्देश्य

प्रस्तुत अनुसंधान का उद्देश्य कुछ ऐसे प्रश्नों का उत्तर देना है, जो पोषण न्यूनता तथा व्यावहारिक विकास–सामाजिक एवं नैतिक विकास, शारीरिक विकास परिवर्त्य से संबंधित है। प्रस्तुत अध्ययन की अनुसंधान योजना निम्नलिखित उद्देश्यों को ध्यान में रखकर बनायी गयी है–

1. विभिन्न विकास प्रक्रिया पर पोषण स्तर के प्रभाव के अध्ययन के लिए उच्च एवं निम्न पोषण स्तर की किशोरियों को अपने प्रतिदर्श की इकाई के रूप में चयन करना।
2. उच्च एवं निम्न पोषण स्तर के परीक्षार्थियों के सामाजिक विकास का तुलनात्मक अध्ययन करना।

3. हायर सकेकेण्डरी एवं उच्च कक्षाओं में अध्ययनरत 15 से 18 वर्षीय किशोरियों के नैतिक विकास परिवर्त्य पर उच्च पोषण स्तर एवं निम्न पोषण स्तर के प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. 15 से 18 वर्ष की किशोरियों के शारीरिक विकास पर उच्च एवं निम्न पोषण स्तर के पड़ने वाले प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अनुसंधान की रूपरेखा

प्रस्तुत अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य उत्तर भारत के पूर्वी उत्तर प्रदेश के हिन्दी भाषी जनपद गाजीपुर के हायर सेकेण्डरी एवं उच्च कक्षाओं में अध्ययनरत उच्च एवं निम्न पोषण स्तर के किशोरियों के व्यावहारिक विकास, सामाजिक एवं नैतिक विकास तथा शारीरिक विकास का तुलनात्मक अध्ययन करना है। इस अनुसंधान कार्य हेतु नगरीय एवं ग्रामीण तथा विभिन्न सामाजिक–आर्थिक स्तर के किशोरियों को प्रतिदर्श के रूप में सम्मिलित किया गया। प्रतिदर्श चयन के पश्चात सर्वप्रथम उन पर पोषण स्तर मूल्यांकन प्रश्नावली प्रशासित करके उन्हें उच्च एवं निम्न पोषण समूहों में विभाजित किया गया। तत्पश्चात् उन पर सामाजिक विकास मापनी, नैतिक विकास मापनी तथा शारीरिक विकास चेकलिस्ट प्रशासित की गयी। प्राप्त प्रदत्तों का सांख्यिकीय विश्लेषण करने के लिए मध्यमान, प्रमाणिक विचलन तथा टी परीक्षण का प्रयोग किया गया तथा मध्यमान मूल्यों का रेखाचित्रण प्रस्तुत किया गया। प्राप्त परिणामों के आधार पर उच्च पोषण स्तर एवं निम्न पोषण स्तर के परीक्षार्थियों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

◆◆◆